समावेशी कक्षाओं के लिए शिक्षकों को तैयार करना

राजश्री श्रीनिवासन

यद्यपि हमारे देश का क़ानून समान गुणवत्ता वाली शिक्षा तक सभी की पहुँच की बात करता है, लेकिन वास्तविकता, असमान पहुँच और निराशाजनक शैक्षिक परिणामों के उदाहरणों से भरी पड़ी है। यहाँ पर बड़ी संख्या में ऐसे बच्चे हैं जो विकलांगता, ग़रीबी और सामाजिक बहिष्कार के शिकार हैं। स्कूली शिक्षा व्यवस्था में, शैक्षिक उपलब्धि दुष्प्राप्य ही रही है, विशेष रूप से पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वाले बच्चों के लिए। इन स्कूलों में शिक्षकों का काम सबसे कठिन है। उन्हें यह सुनिश्चित करना पड़ता है कि सारा शैक्षिक अधिगम स्कूल में ही हो, क्योंकि इन बच्चों को घर पर कोई शैक्षिक सहायता नहीं मिलती है। यह बच्चे ऐसी परिस्थितियों में रहते हैं कि शिक्षकों को पक्के तौर पर यह मालूम नहीं होता कि पारिवारिक या सांस्कृतिक या सामाजिक-आर्थिक कारणों के चलते बच्चे अगले दिन स्कूल आएँगे भी या नहीं। क्योंकि इन बच्चों का जीवन सतत अनिश्चितता और अस्पष्टता की स्थिति में रहता है। उन्हें ऐसे शिक्षकों और एक ऐसी सहयोगी शिक्षा-व्यवस्था की आवश्यकता है जो लगातार यह माने कि सभी बच्चे अधिगम और उपलब्धि के लिए सक्षम हैं। स्कूली शिक्षा के दर्शन और अभ्यास के केन्द्र में यह विश्वास होना चाहिए कि ग़रीबी, जाति, धर्म और अन्य सामाजिक अन्तरों का बुद्धिमत्ता और खोज आधारित सीखने से कोई सम्बन्ध नहीं है।

पिछले दशक में स्कूली शिक्षा और शिक्षक-शिक्षा सम्बन्धी पाठ्यचर्या के विमर्शों में शिक्षार्थियों के बीच विविधता के मुद्दों और सभी बच्चों के अधिगम के लिए शिक्षकों को तैयार करने की आवश्यकता पर ध्यान केन्द्रित किया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2019 के प्रारूप के छठे अध्याय (समतामूलक और समावेशी शिक्षा) के उद्देश्य में समतामूलक और समावेशी शिक्षा व्यवस्था को स्थापित करने की बात कही गई है ताकि सभी बच्चों को सीखने और सफल होने के समान अवसर मिलें। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए इसमें समावेशी शिक्षा को सेवा-पूर्व शिक्षक-शिक्षा और सेवाकालीन पेशेवर विकास का अभिन्न अंग बनाना प्रस्तावित है। इसमें कहा गया है कि:

'... यह कार्यक्रम सुनिश्चित करेंगे कि सभी शिक्षकों को विभिन्न शिक्षार्थियों के प्रति निरन्तर संवेदनशील बनाया जाए जिससे वे विभिन्न शिक्षार्थियों, विशेष रूप से कम प्रतिनिधित्व वाले समूहों के सभी शिक्षार्थियों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम हों।' (पृ.197, प्रारूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2019)

ग़रीब बच्चों को शिक्षित करने के बारे में शिक्षकों की धारणाओं पर किए गए शोध-अध्ययन बताते हैं कि शिक्षकों को लगता है कि इन बच्चों का संज्ञानात्मक स्तर कम होता है और उनके अध्ययन की आदतें भी अच्छी नहीं होतीं (बत्रा, 2015)। सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली में कार्यरत शिक्षकों के बारे में फ़ील्ड से मिलने वाले अन्य विवरण भी हैं (अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, 2019; गिरिधर; 2019), यह ऐसे शिक्षकों के जीवन को दर्शाते हैं जो जाति, धर्म, वर्ग और अन्य संस्थागत और नौकरशाही संरचनाओं की सीमाओं के पार जाते हैं, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि बच्चे सीखें और अपनी स्कूली शिक्षा पूरी करें।

तो दोनों प्रकार के विवरण मौजूद हैं। महत्त्वपूर्ण सवाल यह है कि हम, सभी बच्चों के अधिगम और विकास को बेहतर बनाने के उद्देश्य से समावेशी शिक्षा हेतु शिक्षक तैयारी का कार्यक्रम कैसे विकसित करते हैं? शिक्षणशास्त्र के वे कौन-से तरीक़े हैं जो विद्यार्थियों को अपनी मान्यताओं और धारणाओं को जागरूकता के धरातल पर लाने में मदद करेंगे?

शिक्षण करना सीखना : शिक्षक-शिक्षा का शिक्षणशास्त्र

शिक्षण करना सीखना एक जटिल कार्य है। यह छात्र-शिक्षक और उसके भावी पेशे के बीच सम्पर्क का पहला चरण है। सेवा-पूर्व शिक्षक-शिक्षा के उद्देश्यों में इन बातों को शामिल किया गया है : अपने चुने हुए स्कूली विषय से सम्बन्धित सामग्री और शिक्षणशास्त्रीय ज्ञान को विकसित करना, शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि और अधिगम की प्रक्रिया को समझना, स्कूल के सन्दर्भों में बच्चों और शिक्षकों के साथ काम करने के लिए सामाजिक और नैतिक प्रवृत्तियों को विकसित करना और नियोजन, शिक्षाशास्त्र और आकलन के बारे में विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों की जानकारी प्राप्त करना। शिक्षक-शिक्षा का शिक्षाशास्त्र इस आधार पर टिका हुआ है कि सिद्धान्त, अभ्यास और जाँच-पड़ताल करना एक-दूसरे के भीतर अन्तर्निहित है और सैद्धान्तिक और व्यावहारिक ज्ञान का विकास, शैक्षिक अभ्यास की एक समृद्ध परिकल्पना के केन्द्र में होता है।

छात्र-शिक्षक अपने शिक्षार्थी जीवन की पृष्ठभूमि, अपने बचपन के अनुभवों और सीखने के बारे में तमाम मान्यताओं और धारणाओं के साथ कार्यक्रम में प्रवेश करते हैं। उन्हें अपनी मान्यताओं को व्यक्त करने और उस पर चिन्तन करने का अवसर मिलना चाहिए। मान्यताएँ हमारे अभ्यास को आकार देती हैं। नए ज्ञान

का निर्माण, पूर्व-धारणाओं की जाँच-पड़ताल से शुरू होता है। फीमैन-नेम्सर एवं बुकमैन (1986) यह मानते हैं कि : "शिक्षण करना सीखने के लिए न तो केवल प्रत्यक्ष अनुभव काफ़ी है और न ही विश्वविद्यालय की शिक्षा। यदि वर्तमान मान्यताओं और धारणाओं की जाँच में शिक्षक बनने के इच्छुक विद्यार्थियों की मदद न की जाए तो इस बात की सम्भावना है कि वे पारम्परिक मान्यताओं को बनाए रखेंगे और नई जानकारी व पेचीदा अनुभवों को पुराने ढाँचे में शामिल करेंगे।"(पृ. 225)

मैं बाल विकास और अधिगम का पाठ्यक्रम पढ़ाती हूँ और यहाँ उल्लिखित शिक्षणशास्त्रीय दृष्टिकोण मेरे उन्हीं अनुभवों से उपजा है। इस पाठ्यक्रम में बचपन, बच्चों, अधिगम और शिक्षण के बारे में पूर्व धारणाओं को चुनौती देने का हर सम्भव प्रयास किया जाता है।

पठन और चर्चाओं के माध्यम से मान्यताओं को चुनौती देना

पाठ्यक्रमों के लिए लेखों का चयन करना विद्यार्थियों को उनकी पूर्व मान्यताओं की जाँच करने के लिए चुनौती देने का एक अच्छा स्रोत है। लेख पढ़ने के दौरान इस बात के अवसर दिए जाने चाहिए जिसमें बचपन, जाति, लिंग,विकलांगता, ग़रीबी से सम्बन्धित वैकल्पिक दृष्टिकोण पर चिन्तन, चर्चा और विचार किया जा सके। शुरुआती कुछ कक्षाएँ इन मुद्दों पर केन्द्रित होती हैं- बच्चा कौन है? बचपन का अर्थ क्या है? क्या यह एकात्मक अवधारणा है? क्या सभी बच्चे समान रूप से बचपन का अनुभव करते हैं? मैं ग़रीबी, बचपन और अधिगम के इर्द-गिर्द एक विशिष्ट चर्चा भी करती हूँ। ग़रीबी पर चर्चा के माध्यम से सड़कों पर, संस्थागत घरों में, युद्ध क्षेत्रों में, पहाड़ी क्षेत्रों आदि विभिन्न परिस्थितियों में रहने वाले बच्चों से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दे उभर कर आते हैं। हमारे विद्यार्थी समय-रेखा से सम्बन्धित एक गतिविधि करते हैं जो उन्हें अपने बचपन के दिनों में वापस जाने और उन कारकों के बारे में सोचने के लिए प्रेरित करती है जिन्होंने उनके अधिगम को आकार दिया।

विद्यार्थियों को पढ़ने के लिए पूर्ण लेख या सम्पादित अंश दिए जाते हैं, जैसे सुखदेव थोराट का पैसेज टु एडल्टहुड : परसेप्शन फ्रॉम बिलो, बाल श्रम पर शारदा बालगोपालन का रिमेंबरिंग चाइल्डहुड, नोशन्स ऑफ सेल्फ : लिव्ड रिएलिटीस ऑफ चिल्ड्रन विद डिसएबिलिटीस पर सिंह और घई का लेख। संघर्ष-क्षेत्रों में बच्चे, पोषण सम्बन्धी समस्याओं वाले बच्चे, सड़कों पर रहने वाले बच्चे आदि विषयों पर लिखे गए वृतान्त भी साझा किए जाते हैं।

केवल लिखित सामग्री ही नहीं बल्कि विद्यार्थी विभिन्न सन्दर्भों वाले बच्चों पर बनाए गए वीडियो भी देखते हैं। जिन विद्यार्थियों ने एक जैसे लेख पढ़े हैं, वे एक समूह बनाते हैं और उन्हें चर्चा के लिए कुछ प्रश्न दिए जाते हैं जो सार्थक बातचीत के लिए महत्त्वपूर्ण होते हैं। लेकिन यह प्रश्न बातचीत को केवल एक सीमा तक ही दिशा देते हैं और मुक्त-चर्चा के लिए काफ़ी अवसर रहता है। ऐसे प्रश्नों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :

हमारे समाज ने कामकाजी बच्चों/विकलांग बच्चों की छवि का निर्माण/ निरूपण कैसे किया है? इस निर्मिति का क्या प्रभाव है? इन बच्चों के जीवन में शिक्षा का क्या स्थान है? क्या उनके बचपन की निर्मिति के वैकल्पिक तरीक़े हैं?

सहयोगात्मक चर्चा के बाद सामूहिक प्रक्रिया होती है, जिसमें पूरी कक्षा एक साथ होती है और उनसे उस लेख या पर्चे को संक्षेप में बताने और अपने समूह में हुई चर्चाओं को साझा करने के लिए कहा जाता है। कभी-कभी उनसे अपने विचार अलग से लिखकर देने के लिए भी कहा जाता है। विद्यार्थियों के बीच आत्म-जागरूकता पैदा करने और उन्हें हाशियाकृत तबक़े के बच्चों की पृष्ठभूमि को समझने में मदद करने के लिए रीडिंग्स/लेखों के साथ-साथ कक्षा में चर्चा करना एक बहुत ही सशक्त माध्यम हो सकता है।

छात्र-शिक्षकों को समाज में लिंग, जाति, वर्ग, भाषाई भिन्नता, विकलांगता व समता और न्याय के बरक्स अपनी स्वयं की स्थितियों पर चिन्तन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस तरह की सामूहिक चर्चाओं के दौरान यह अपरिहार्य है कि बड़ी सामाजिक प्रक्रिया, बाज़ार की परिघटना, राजनीति, मानवाधिकार उल्लंघनों एवं विभिन्न नैतिक पक्षों/स्थितियों के बारे में प्रश्न उभरें। विद्यार्थियों की अनुक्रियाओं और उनके वैकल्पिक विचारों से शिक्षक-प्रशिक्षक के अनुभव को मज़बूत करने और उनके शिक्षण को प्रामाणिक बनाने में भी मदद मिलती है। विद्यार्थियों को एहसास होता है कि कुछ प्रश्न ऐसे भी होते हैं जिनके सीधे उत्तर नहीं होते। उसके लिए उन्हें कठिन परिश्रम करना होगा और बचपन से सम्बन्धित विचारों को गहराई से समझना होगा।

फ़ील्ड के अनुभवों के माध्यम से मान्यताओं को चुनौती देना

हमारे मास्टर ऑफ़ एजुकेशन कार्यक्रम में बाल विकास और अधिगम की शिक्षा दी जाती है। इसमें एक व्यावहारिक घटक है, जिसके अन्तर्गत विद्यार्थी अनाथालय, विकलांगता केन्द्र, किशोर गृह, शहरी झुग्गियों और ऐसे ही अन्य संस्थानों का दौरा करते हैं। इन संस्थानों में बड़ी संख्या में बच्चे हाशियाकृत तबक़े से होते हैं और जो पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वाले हो सकते हैं। हमारे विद्यार्थी इन बच्चों के साथ खेलते हैं और उनसे बातें करते हैं। इससे वे उनके रोज़मर्रा के जीवन, दिनचर्या, भोजन की आदतों, खेल और स्कूली शिक्षा में उनकी रुचि के बारे में समझ पाते हैं। विद्यार्थी इन अवलोकनों के विश्लेषण में, बाल-विकास और अधिगम के सिद्धान्तों की अपनी समझ का उपयोग करते हैं।

इन विद्यार्थियों के मन में लम्बे समय से बच्चों और बचपन के बारे में जो मान्यताएँ होती हैं उन्हें तब चुनौती मिलती है जब वे कमज़ोर सामाजिक-आर्थिक सन्दर्भों से आने वाले बच्चों की 'आवाज़ों' को सुनते हैं। वे आत्म-निरीक्षण और तर्क करने लगते हैं। संज्ञानात्मक और भावनात्मक बेचैनी उन्हें सहमति, असहमति और तनाव की ओर ले जाती है। विद्यार्थियों को एहसास होता है कि उन्हें अपनी मान्यताओं और रूढ़िबद्ध धारणाओं को छोड़कर दूसरों के दृष्टिकोण पर विचार करना चाहिए। यह चर्चाएँ उनके अनुभवों के प्रकाश में मौजूदा धारणाओं पर पुनर्विचार/प्रश्न करने के अवसर प्रदान करती हैं और अनुभवों को परिष्कृत करने, योग्य ठहराने या समीक्षा करने और पुनर्निर्माण करने की प्रक्रिया के माध्यम से वे नए ज्ञान और विविध अवधारणाएँ निर्मित करते हैं। अक्सर वे रिफ्लेक्टिव जर्नल में भी लिखते हैं। एक विद्यार्थी का कहना था, "मैंने सोचा था कि अनाथालय में रहने वाले बच्चे दुखी होंगे। लेकिन ऐसा नहीं है। वे काफ़ी मज़े में हैं और उन्होंने मुझसे कई ऐसे सवाल किए जिनका मेरे पास कोई जवाब नहीं था।"

इस प्रकार, विद्यार्थी यह समझ पाते हैं कि ग़रीबों की परिस्थितियाँ उनकी व्यक्तिगत विशेषताओं या माता-पिता की शालीनता या अज्ञानता से परिभाषित नहीं होतीं। दूसरे शब्दों में, विद्यार्थी हाशियाकृत तबक़े के बच्चों के बारे में समाज में व्यापक रूप से प्रचलित 'अपूर्णता/कमी' के दृष्टिकोण पर सवाल खड़े करते हैं। वे यह भी समझ पाते हैं कि बचपन न केवल एक जैविक रचना है, बल्कि एक सामाजिक रचना भी है।

> पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वाले कई बच्चे, जिनका जीवन सामाजिक-सांस्कृतिक प्रथाओं/रिवाज़ों और वित्तीय बाधाओं से अवरोधित होता है, उन्हें स्कूल में एक ऐसे वयस्क की आवश्यकता होती है जो उनकी देखभाल और सहायता करे और जो इस बात में दृढ़ विश्वास रखता हो कि सभी बच्चे सीखने में सक्षम होते हैं। स्कूलों, पाठ्यक्रम, शिक्षाशास्त्र और आकलन को व्यवस्थित करने वाले केन्द्रीय सिद्धान्तों में से एक प्रमुख सिद्धान्त है- समावेशन और इसे शिक्षक तैयारी के कार्यक्रमों में प्रमुखता दी जानी चाहिए। उनके पाठ्यक्रम में पढ़ने, कक्षा की चर्चाओं और फ़ील्ड के अनुभवों के लिए अधिक अवसर दिए जाने चाहिए।
>
> जो शैक्षणिक अभ्यास विद्यार्थियों को फ़ील्ड, पाठ्य और स्वयं के बीच सम्बन्ध बनाने का मार्गदर्शन करते हैं, वे न केवल, बचपन, शिक्षण और अधिगम के बारे में विद्यार्थियों की मान्यताओं और पूर्व धारणाओं को जागरूकता के स्तर तक लाने में मदद कर सकते हैं, बल्कि स्कूल के वातावरण और कक्षा अभ्यासों को समावेशी बनाने की कल्पना करने में भी उनकी सहायता करेंगे।

एक सदी से भी काफ़ी पहले जॉन ड्युई ने 'द रिलेशन ऑफ थ्योरी टु प्रैक्टिस इन एजुकेशन' शीर्षक का निबन्ध लिखा, जिसमें उन्होंने शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों और उनकी सोच के बारे में अपना ज्ञान बढ़ाने पर विस्तारपूर्वक बात की। उन्होंने इसे 'अन्तर्मन में झाँकना' के रूप में वर्णित किया, यानि शिक्षक की अपने विद्यार्थियों की सोच और अनुक्रियाओं से ख़ुद को जोड़ने की क्षमता और उन 'प्रवृत्तियों व आदतों को पहचानना जो उनके अपने होने, कहने और करने के तरीक़ों के कारण विद्यार्थियों में पोषित हो रही हैं या उन्हें निरुत्साहित' कर रही हैं।

यहाँ यह प्रश्न पूछना उचित हो सकता है कि : क्या छात्र-शिक्षक अपने विद्यार्थियों के साथ उन तरीक़ों से जुड़ने का प्रयास कर सकते हैं जो ड्युई के बच्चों को जानने के बारे में विचारों के साथ मेल खाते हों? एक समावेशी समाज हेतु, सक्षम और ध्यान रखने वाले शिक्षकों को विकसित करने के लिए हमें ड्युई के प्रस्ताव पर विचार करना होगा और अपने शैक्षणिक अभ्यासों के माध्यम से 'बच्चों के अन्तर्मन' की समझ तक पहुँचना होगा।

References

Azim Premji University (2019).

https://practiceconnect.azimpremjiuniversity.edu.in/category/practice-insights/teachers-for-inclusive-society/

Batra (2015) Quality of Education and the Poor: Constraints on Learning. TRG Poverty and Education. Working paper series. (p1-14) Max Weber Stiffing

Feiman-Nemser, S., & Buchmann, M. (1986). The first year of teacher preparation: Transition to pedagogical thinking? Journal of Curriculum Studies, 18(3), 239-256.

Giridhar, S (2020). Ordinary People, Extraordinary teachers: The heroes of real India. Westland Publications Private Company: Chennai

राजश्री श्रीनिवासन अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर हैं। वे शिक्षक-शिक्षा और बाल-विकास में रुचि रखती हैं। उनसे rajashree@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल